Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 29-11-2022, Accepted: 14-12-2022, Published: 31-12-2022
Volume 3, Issue 2, 2022, Page No. 16-19

हरियाणवी लोक साहित्य में सामाजिक–सांस्कृतिक परम्पराओं का चित्रण

डॉ. सुरेन्द्र कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर (हिन्दी), राजकीय महाविद्यालय, भिवानी, हरियाणा, भारत

सारांश
किसी भी देश–प्रदेश और अंचल विशेष का साहित्य 'कागद की लेखी' नहीं अपितु 'आँखिन की देखी' का साहित्य होता है। उसमें 'पोथियों का थोथा और कोरा ज्ञान नहीं अपितु प्रेम का पारावार हिलौरें मारता है। वह पंडिताई का नहीं अपितु प्रेम का प्रकटीकरण है। इसलिए लोक साहित्य की जड़ें बहुत गहरी और मजबूत होती हैं। वह हमारी सांस्कृतिक विरासत को सहेजकर और संजोकर रखता है, उसको एक नई पहचान देता है और अपनी लोक परम्पराओं और लोक संस्कृति के प्रति एक रागात्मक और भावनात्मक लगाव पैदा करता है। लोक साहित्य हमारे जीवन और मौलिक संस्कृति का आधार तत्व रहा है। सही अर्थों में लोक साहित्य आम आदमी का, आम आदमी के लिए और आम आदमी के द्वारा रचित साहित्य है। इसलिए किसी भी युग का लोकसाहित्य उस युग के सामाजिक इतिहास का मौखिक दस्तावेज होता है। लोकसाहित्य पर जीवन संघर्षो की अमिट छाप होती है तथा वह जीवनधर्मी संकल्पों की विरासत भी है। हरियाणवी लोक साहित्य के अन्तर्गत विविध राग–रागणियाँ हरियाणा प्रदेश के विभिन्न अंचलों में निर्मित उस साहित्यनिधि का उद्‌बोधन कराते हैं जो यहाँ की कला, संस्कृति, लोकगाथा, लोककथा, लोकवार्ता, लोकगीत तथा लोकसम्बंद्ध परम्पराओं से संबंधित है। 'हरियाणवी लोकसाहित्य' निश्चय ही उस अगाध और विशाल महासमुद्र की भाँति अनंत मणिरत्नों से देदीप्यमान है, जो लोक परम्पराओं के निर्वहन और ग्रामीण अंचलों में जन चेतना के प्रसार में मील का पत्थर साबित हुआ है।

मूल शब्दः विरासत, लोक साहित्य, लोक संस्कृति, जिजीविषा, रागणियाँ, सांग, श्रमजीवी, कर्मठता।

साहित्य सत् का सहयोगी और सत्य का उद्‌घाटन तथा साक्षात्कार कराने वाली विधा है। प्रत्येक रचनाधर्मी लोक कल्याण की ऐषणा को मन में संजोकर उस तथ्य और सत्य की गवेषणा करता है जो मानव को मानव बनाता है। परिमार्जित भाषा के साहित्य की तुलना में लोक साहित्य लोगों के अधिक करीब होता है क्योंकि यह गरीब को गले लगाने वाला साहित्य है। लोक साहित्य 'लोक' और 'साहित्य' दो शब्दों के मेल से निर्मित है। साहित्य में वर्णित 'लोक' शब्द के अर्थ को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने व्याख्यायित करते हुए लिखा है कि ''लोक का अर्थ नगरों एवम् गाँवों में फैली उस समूची जनता से है जो परिष्कृत, रुचि–सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन की अभ्यस्त होती है जिनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं।''[1] परम्पराओं और लोक अनुभवों से सिंचित साहित्य ही आम आदमी की गरिमा और महिमा को पहचानता है, उसका संरक्षण करता है और उसको सहेजकर रखता है। डॉ. सत्येन्द्र के अनुसार ''लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पांडित्य की चेतना अथवा अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है।''[2]

किसी भी देश–प्रदेश और अंचल विशेष का साहित्य 'कागद की लेखी' नहीं अपितु 'आँखिन की देखी' का साहित्य होता है। उसमें 'पोथियों का थोथा और कोरा ज्ञान नहीं अपितु प्रेम का पारावार हिलौरें मारता है। वह पंडिताई का नहीं अपितु प्रेम का प्रकटीकरण है। इसलिए लोक साहित्य की जड़ें बहुत गहरी और मजबूत होती हैं। वह हमारी सांस्कृतिक विरासत को सहेजकर और संजोकर रखता है, उसको एक नई पहचान देता है और अपनी लोक परम्पराओं और लोक संस्कृति के प्रति एक रागात्मक और भावनात्मक लगाव पैदा करता है। लोक साहित्य हमारे जीवन और मौलिक संस्कृति का आधार तत्व रहा है। सही अर्थों में लोक साहित्य आम आदमी का, आम आदमी के लिए और आम आदमी के द्वारा रचित साहित्य है। इसलिए किसी भी युग का लोकसाहित्य उस युग के सामाजिक इतिहास का मौखिक दस्तावेज होता है। लोकसाहित्य पर जीवन संघर्षो की अमिट छाप होती है तथा वह जीवनधर्मी संकल्पों की विरासत भी है।

जब हम हरियाणवी लोक साहित्य का स्मरण करते हैं तो उसकी विरासत भी बहुत पुरानी और धनी है। हमारा लोक–साहित्य हरियाणवी लोगों की मौखिक अभिव्यक्ति है। उसमें समूचे लोक मानस की प्रवृत्ति समाई हुई है। वर्षों से लोक–साहित्य ग्राम्यांचल की मौखिक और पारम्परिक अभिव्यक्ति में समाहित रहा है क्योंकि परम्पराएँ समय के साथ विलुप्त भी होती रहती हैं इसलिए समय की मांग को देखते हुए लोक साहित्य को संरक्षित करने के लिए व्यापक स्तर पर लिपिबद्ध किया जाने लगा है जिसके करण उसके कुशलक्षेम की आशा बंधी है। हरियाणवी लोक–साहित्य भी भारतीय लोक वाङ्मय की विशिष्ट सम्पदा है। हरियाणवी बोली में रचित यह साहित्य हरियाणा प्रदेश के निवासियों के कण्ठ–कण्ठ में विराजमान है। समय–समय पर इसको लिपिबद्ध भी किया जाता रहा है। यह साहित्य अल्हड़ और मस्ती का साहित्य है। इसमें आम जनमानस की भावनाएँ आकाश की तरह असीम और समुद्र की तरह गहरी किन्तु निरन्तर हिलौरें मारने वाली हैं। लोक साहित्य वास्तव में लोगों का अपना साहित्य है जिसमें केवल नैसर्गिकता, रागात्मकता, भावात्मकता, भोलापन, आत्मीयता, सहृदयता, सादगी और सात्विकता है। वह बनावटीपन, अभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पाण्डित्य की अहंकारजन्य दुर्भावनाओं से सर्वांशतः परे होता है। इसमें समूचे लोक–मानस की प्रवृत्तियाँ और सद्‌वृत्तियाँ समाई हुई रहती हैं। हरियाणवी लोक–साहित्य की विधाओं यथा– लोकगीतों, रागणियों, सांगों, लोक किस्सों, लोक–कथाओं,

लोक–गाथाओं, लोक नाट्यों, कहावतों, पहेलियों आदि की दृष्टि से समृद्ध रहा है। भले ही लोकगीतों की सृष्टि व्यष्टिगत हो किन्तु अभिव्यक्ति समष्टिगत होती है। लोकगीतों में हृदय की स्पष्ट, सच्ची और बेलाग वाणी उच्चरित होती है। लोकगीत किसी एक व्यक्ति की रचना न होकर, समूहगत रचनाशीलता का परिणाम है। लोकगीतों में जीवन को अखण्डित रूप से देखने की दृष्टि जबरदस्त होती है। डॉ. सत्येन्द्र लोकगीत की परिभाषा देते हुए लिखते हैं कि ''वह गीत जो लोकमानस की अभिव्यक्ति हो अथवा जिसमें लोक मानसाभास भी हो, लोकगीत के अन्तर्गत आयेगा।''[3] हरियाणा के लोकगीत परम्परागत रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मौखिक रूप से ही हस्तांतरित होते रहे हैं। यही कारण है कि उनका मूल रूप जस का तस बना हुआ है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक साहित्य की इसी विशेषता को इंगित करते हुए कहा है – ''परम्परागत रूप से चला आ रहा यह साहित्य जब तक मौखिक रहता है तभी तक इसमें ताजगी तथा जीवन पाया जाता है। लिपि की कारा में कैद करते ही उसकी संजीवनी शक्ति नष्ट हो जाती है।''[4]
हरियाणवी लोक साहित्य में विशेषकर लोकगीतों में जनता के हृदय की सहज भावनाएँ अत्यन्त सरल रूप में प्रकट हुई है। उनमें किसी भी प्रकार की कृत्रिमता नहीं मिलती है। यही कारण है कि जहाँ हरियाणा प्रदेश लोक साहित्य का सागर है वहीं यहाँ के लोकगीत उसका एक परिपुष्ट अंग है। लोकगीत हमारे लोगों के जीवन की अनायास प्रवाहात्मक और सहज अभिव्यक्ति हैं जो सुसंस्कृत तथा सुसभ्य प्रभावों से बाहर रहकर कम या अधिक रूप से आदिम अवस्था में निवास करते हैं। यहाँ का लोकमानस और लोक जीवन हरियाणवी लोकगीतों की पृष्ठभूमि है। यहाँ के सामाजिक, पारिवारिक और लौकिक जीवन का कोई पहलू ऐसा नहीं है जो लोकगीतों की स्वर लहरी से अछूता रह गया हो। जीवन का आनंद, उत्साह और मानवीय संबंधों का अनंत प्रवाह इन गीतों में मुखर हुआ है। प्रकृति और पुरूष के संबंधों, हास्य व रूदन की भावपूर्ण अभिव्यक्ति तथा लोक जीवन के सभी रसों को हम हरियाणवी लोकगीतों, लोक किस्सों और रागणियों में देख सकते हैं।

''आवैगा भाई आवैगा, मेरी माँ का जाया आवैगा।
माँ की तील, बाहण का जोड़ा, बहू की झांझण ल्यावैगा।''[5]

हरियाणा का लोकमानस और लोक जीवन हरियाणवी लोक साहित्य की पृष्ठभूमि है। यहाँ के सामाजिक, पारिवारिक और लौकिक जीवन का कोई पहलू ऐसा नहीं है जो लोकगीतों और रागणियों की स्वर लहरी से अछूता रह गया हो। जीवन का आनंद, उत्साह और मानवीय संबंधों का अनंत प्रवाह इन गीतों में मुखर हुआ है। प्रकृति और पुरूष के संबंधों, हास्य व रूदन की भावपूर्ण अभिव्यक्ति तथा लोक जीवन के सभी रसों को हम हरियाणवी लोकगीतों में देख सकते हैं। हरियाणवी साहित्य विशुद्ध मनोरंजन एवं सामाजिक जीवन की उठा–पटक, संघर्ष तथा हरियाणवी लोगों की जीवट जिजीविषा का दिग्दर्शन कराता है, वहीं यह विमर्श के नए आयाम खोलता है। हरियाणवी लोक साहित्य को समृद्ध करने और लोकप्रिय बनाने में सूर्यकवि पंडित लखमीचन्द, फौजी कवि जाट मेहर सिंह, मांगेराम, धनपत, दयाचन्द, रघुनाथ, जगन्नाथ, रामकिशन व्यास जैसे अनेकानेक कवियों और सांगियों का तथा कर्मपाल शर्मा निरोजपुरिया, राजकिशन अगवानपुरिया, रणबीर बड़वासनिया, गुलाब सिंह, रामफल शर्मा, सरिता चौधरी, नीलम चौधरी, मंजु शर्मा जैसे लोक गायक–गायिकाओं का अमूल्य योगदान रहा है।

हरियाणवी लोकगीतों में धार्मिक आस्था भी है और परम्परा के प्रति समर्पण भाव भी। श्रम की प्रतिष्ठा भी हुई है और धार्मिक मान्यताएँ तथा शकुन–अपशकुन का विचार भी। सुख–दुःख में लोक मानस के आधार पर देवी–देवताओं की प्रार्थना और गुणगान भी लोकगीतों में हुआ है। विशेष बात यह है कि यह प्रार्थना व्यक्तिगत ना होकर समूचे समाज की होती है। उत्सव व त्योहारों के गीतों में भी समूह के जीवन का हर्ष और उल्लास व्यक्त होता है। देश के लिए मर मिटने का भाव भी सिर चढ़कर बोलता है। इसीलिए फौजी कवि जाट मेहर सिंह कहते हैं –

''साथ रहणिया संग के साथी दया मेरे पै फेर दियो,
देश के ऊपर जान झोंक दी लिख चिट्ठी में गेर दियो।''

हरियाणवी लोक गीतों में सामाजिक जनचेतना के लिए कवियों ने नैतिक मूल्यों पर विशेष बल दिया है। उन्होंने सामाजिक सहयोग, सहानुभूति, प्रेम, करूणा, दया, परोपकार, नैतिकता, एकता और भाईचारे की भावना को बढ़ावा दिया है। इस दृष्टि से लखमीचंद की लिखी हुई रागणियां बेजोड़ है। उसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

''रोये मान घटै बन्दे का दुःख चिंता में काया,
अनरीति में राज चल्या जा झगड़े में धन माया।''

हरियाणवी साहित्य किसान–मज़दूर, शोषित–पीड़ित और दीन–दुःखी का सच्चा साथी और हिमायती है। किसान अपने खून–पसीने से अन्न उपजाता है किन्तु उसे फसल की लागत का उचित मूल्य कभी नहीं मिलता। देश का अन्नदाता राजनीतिक जुमलों का शिकार होता रहा है किन्तु किसान के दुःख–दर्द को सही मायने में केवल कवि ही समझता है इसलिए उसकी श्रमसाधना सा सम्मान करते हुए गाँव रोढ़ाँ जिला भिवानी के कवि (प्रोफेसर) सुरेन्द्र कुमार लिखते हैं –

किसान म्हारा अन्नदाता सै यो भरै हिन्द की झोली।
मतना करै अन्याय राजन या कौम सै सादी भोली।।
सबका पेट भरणिये माणस आज भूखे पेट सोवैं सैं
ये धरती माँ का चीरके सीना, फेर बीज बोवैं सैं

जब खून पसीना रलै रेत में, तब दाणे होवैं सैं
टूटे लित्तर फाटे वस्तर न्यू सदा जंग झोवैं सै
आपणी किस्मत नै रोवैं सैं, जाणै कित पड़के वा सोली।
मतना करै अन्याय राजन या कौम सै सादी भोली।।[6]

प्रत्येक समाज अपनी सुव्यवस्था के लिए अनेकानेक व्यवस्थाओं, परम्पराओं और प्रथाओं का निर्माण तथा उनका अनुसरण करता है। ये परम्पराएं और व्यवस्थाएँ समाज को विकास के पथ पर अग्रसर करती हैं। देश और काल के अनुरूप इन परम्पराओं एवं प्रथाओं की उपयोगिता तथा सार्थकता से इनकार नहीं किया जा सकता। आज आधुनिक युग में लड़कियों और महिलाओं पर अत्याचार और दुराचार हो रहे हैं। इस सम्बन्ध में सारे समाज में नई चेतना का विकास होना बहुत आवश्यक है। यही कारण है कि फौजी कवि मेहर सिंह ने अपनी पत्नी की चिन्ताओं और मनोभावों का सजीव चित्रण इस रागणी में किया है –

फौज मै जाकै भूल ना जाइये साजन प्रेम कौर नै,
डर डर कै मर ज्याँगी मै देख कै घटा घोर नै।
हाँ शाम सवेरी मनै एकली नै खेत मै जाणा हो
बदमासाँ की टोली घूमै मुस्किल गात बचाणा हो
तेरी खातर रहूँगी जीवती जब तक पाणी दाणा हो
नहीं मौत का कोई भरोसा कद होज्या माल बिराणा हो।

हरियाणवी लोक साहित्य प्रदेश की लोक संस्कृति का प्राणतत्व है। यहाँ की धरती राग और रंग की धरती है। यहाँ के लोक साहित्य में सहज मनोभावों, चारित्र्यपूर्ण नीतियों और जीवन की नानाविध अनुभूतियों के हीरे–मोती बिखरे पड़े हैं। हरियाणवी लोग बहुत वीर, बलशाली और श्रमजीवी हैं। इसलिए उनकी कर्मठता को इस प्रकार चित्रित किया गया है –

कोय नौकरी पेशे में जुट रह्या ,कोय खेत मैं मौज करै सै
कोय डांगर पशु चरावै सै कोय आपणा धंधा रोज करै सै
कोय हाली पाली बणग्या और कोय नौकरी फौज करै सै
ये बालक पढके आगै बढरे फेर सारे घर की गौज भरै सै
'जाट सुरेन्द्र' छन्द की खोज करै सै, याद तनै कई बार करै।[7]

बढती हुई कमरतोड़ महंगाई और फैशनपरस्ती गरीबों के लिए जानलेवा साबित हो रही है, इसलिए कवि चिन्तित है –

''डावांडोल जमाना होग्या गरीबाँ की करड़ाई,
हरियाणे नै मारैगी या फैशन और महंगाई।''

हरियाणवी कवियों ने जहाँ एक ओर नारी के सतीत्व और जननी रूप की भरपूर प्रशंसा की है वहीं दूसरी ओर उसके कंचन और कामिनी रूप से सचेत रहने की सलाह भी दी है–

''करके प्यार बुलाले घर पै कदे चौड़े में मरवादे,
हो इसी जात लुगाई की जो धेले का करवादे।''

वर्तमान में जीवनमूल्यों का क्षरण और मर्यादाओं का अतिक्रमण सामाजिक अवमूल्यन का द्योतक है। हमारे समाज में सदियों से स्थापित मर्यादाएँ और रिश्ते प्रतिदिन तार–तार होते दिखाई दे रहे हैं। इसलिए इन रागणियों के माध्यम से कवियों ने इस प्रकार के असामाजिक, अर्यादित और अनैतिक आचरण का भी डटकर विरोध किया है। 'पूरणमल' के किस्से में जब उसकी सौतेली माँ नूणा देवी पूरणमल को अपनी हवस का शिकार बनाने में असफल रहती है तो अपने वृद्ध पति और सियालकोट के राजा शालिवाहन (सलेभान) से उसकी झूठी शिकायत कर देती है कि पूरण उसे बुरी नज़र से देखता है तब राजा अपनी नई रानी की बात पर विश्वास करते हुए उसे मौत की सजा सुना देते हैं लेकिन पूरण की सगी माँ राजा के सामने अपने बेटे को निर्दोष बताती है और उन्हें अपनी सौतन की चाल के बारे में समझाती है लेकिन राजा को तो अपनी नवविवाहित रानी की बात पर ही भरोसा है इसलिए वह पूरणमल की माँ को ही समझाते हुए कहता है कि –

''जो बेटा माँ पै नज़र डारले
उस बेटे तैं घाट सारले
इसे पाजी का शीश तारले, तलवार हाथ में ठाके,
मतना गौरी लाड करै तू यो पापी छाती के लाके।''[8]

लोक साहित्य में स्थानीयता अर्थात् प्रादेशिकता तथा आस–पास के परिवेश का भी स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है चाहे उसके कथानक में किसी भी महापुरुष या महाराजा का चरित्र वर्णित हो, स्थानीय रंगत की झलक के साथ ही उस प्रदेश विशेष के रहन–सहन, भाषा–बोली, रीति–नीति, प्रथा–परंपरा, खान–पान, आचार–व्यवहार आदि का सजीव चित्रण

लोकगीतों व रागणियों के माध्यम से प्रत्यक्ष हो उठता है। साथ ही उसमें ऐतिहासिक इतिवृत्तों, घटनाओं और सामाजिक–सांस्कृतिक प्रथाओं का भी उल्लेख होता है। लोक किस्सों में ऐतिहासिकता के साथ ही साँस्कृतिक विरासत के तत्व भी मिलते हैं किंतु इनमें ऐतिहासिकता तो नाममात्र की और कल्पना का पुट अधिक होता है। इन किस्सों में जानी चोर, शाही लक्कड़हारा, हीर–रांझा, पिंगला भरथरी, नरसी का भात, सरवर नीर, पूरणमल, चाप सिंह, मोरध्वज, राजा हरिश्चन्द्र, सेठ ताराचन्द, कृष्ण सुदामा, गोपीचन्द आदि सैकड़ों प्रमुख सांग और किस्से हैं। इन किस्सों में सदैव सत्य, न्याय और धर्म की जीत दिखाई जाती है। करुणा, प्रेम, दान, परोपकार, दया, समर्पण, त्याग आदि भावों का मानव समाज में प्रसार करने में ये लोकगाथाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लोकगाथाएं मनोरंजन और ज्ञानवृद्धि करने के साथ–साथ इनका सामाजिक, साँस्कृतिक और धार्मिक महत्व भी होता है क्योंकि इनमें प्रायः अलौकिक देवी–देवताओं की, लोक–देवता के ही जीवन चरित्र और गुणों–कार्यों को गाकर जन–जन को आनंद, उत्साह से भरने के साथ ही मनुष्य को जाति–धर्म और साम्प्रदायिक संकीर्णताओं से ऊपर उठाकर सदाचार, नैतिकता और ईमानदारी का पाठ पढाया गया है। सामाजिक मूल्यों के पतन को रोकने एवं पुनः मूल्यों और सामाजिक आदर्शों की स्थापना एवं संरक्षण के लिए लोक–गाथाएँ अनमोल विरासत है। इनमें निहित महान् उद्देश्य और सीख को अपनाकर हम जन–जीवन को सुखी और सम्पन्न बना सकते हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार 'लोक' शब्द अपनी अर्थवत्ता में इतना अधिक व्यापक और गम्भीर है कि उसके अंतर्गत सामान्य जनसमुदाय से लेकर सम्पूर्ण चराचरलोक की अखिल सृष्टि समाविष्ट हो जाती है। उसके साथ 'साहित्य' शब्द का समायोजन करने से 'लोक साहित्य' पद निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है लोकमानस की परम्परा से विरचित वह साहित्य जो जनगण की वाणी से मुखरित होता है तथा जिसमें जीवन की सहज संवेदनाओं की नैसर्गिक अभिव्यक्ति होती है। यह सामासिक पद जब 'हरियाणवी' शब्द के साथ जुड़ जाता है तो वह हरियाणा प्रदेश के विभिन्न अंचलों में निर्मित उस साहित्यनिधि का उद्बोधन कराता है जो यहाँ की कला, संस्कृति, लोकगाथा, लोककथा, लोकवार्ता, लोकगीत तथा लोकसम्बंद्ध परम्पराओं से संबंधित है। 'हरियाणवी लोकसाहित्य' निश्चय ही उस अगाध और विशाल महासमुद्र की भाँति अनंत मणिरत्नों से देदीप्यमान है, जो लोक परम्पराओं के निर्वहन और ग्रामीण अंचलों में जन चेतना के प्रसार में मील का पत्थर साबित हुआ है।

सन्दर्भ सूची

1. आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, लोकसाहित्य का अध्ययन, जनपद, अंक
2. डॉ. सत्येन्द्र, लोक साहित्य का विज्ञान, पृष्ठ 3
3. डॉ. सत्येन्द्र, लोक साहित्य का विज्ञान, पृष्ठ 390
4. लोक साहित्य की भूमिका– कृष्णदेव उपाध्याय
5. भीम सिंह मलिक, 'हरियाणा लोक साहित्य, सांस्कृतिक सन्दर्भ
6. डॉ. सुरेन्द्र कुमार, रागणी का एक छनद
7. डॉ. सुरेन्द्र कुमार, रागणी का एक छनद
8. डॉ. सुरेन्द्र कुमार, रागणी का एक छन्द